महाभोज : एक मूल्यांकन

डॉ. आर.पी. वर्मा,

एसो. प्रो. एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गोसाईखेड़ा,
जनपद–उन्नाव, उ.प्र.

उपन्यास साहित्य की एक गद्यात्मक विधा है, जिसमें रचनाकार के पास अभिव्यक्त करने किलए एक निश्चित विषयवस्तु होती है। इस विषयवस्तु को कथानक अथवा कथावस्तु कहते हैं। कथावस्तु का संबंध कुछ पात्रों से होता है, जिनके बिना उसका निर्माण नहीं हो सकता। कथावस्तु को प्रस्तुत करते हुए रचनाकार इन पात्रों की प्रकृति, आचार–विचार तथा कुछ अन्य विशेषतओं का भी उद्घाटन करता है, जो पात्रों का चरित्र कहलाता है। ये पात्र अपने वार्तालापों से कथा को विकास देते हैं तथा एक–दूसरे की चरित्रगत विशेषताओं को भी प्रकट करते हैं। कथावस्तु और पात्र किसी स्थान और समय–विशेष से संबंध रखते हैं, जिसे देशकाल कहा जाता है। कथा, पात्र और देशकाल अथवा परिवेश को प्रस्तुत करने की प्रत्येक रचनाकार की अपनी शैली और भाषा होती है और अंततोगत्वा उसका कोई उद्देश्य भी होता है, जिसे वह रचना अंक माध्यम से स्थापित करना चाहता है। परंपरागत रूप से–कथावस्तु, पात्र और उनका चरित्र–चित्रण, देशकाल, वार्तालाप (संवाद), भाषा–शैली और उद्देश्य– उपन्यास की समीक्षा के यही छः तत्व कहे जाते हैं, जिनकी कसौटी पर किसी औपन्यासिक कृति की सफलता अथवा अफसलता का मूल्यांकन किया जाता है। इन तत्वों के सफल संयोजन और सम्बन्ध निर्वाह के संतुलन पर ही उपन्यास की कलात्मक सफलता निर्भर करती है। 'महाभोज' उपन्यास के कलात्मक मूल्यांकन के आधार पर ये छः तत्व ही हो सकते हैं।

'महाभोज' उपन्यास की कथावस्तु का आधार आज की विकृत राजनीति और विघटित होते मानवमूल्य हैं। कथानक पूरी तरह राजनीतिक है। कथा का आरंभ सरोहा गाँव के बाहर सड़क के किनारे पड़ी एक लाश के मिलने से होता है। यह लाख गाँव के एक पढ़े–लिखे नौजवान बिसू की है। कथा का यह आरंभ अपने आपमें बड़ा कौतूहलवर्द्धक है, जिसे तुरंग गाँव के हरिजन–टोला में लगी आग की घटना से जोड़ दिया गया। आगजनी की इस घटना में भी नौ आदमी जिंदा जल गए थे। दोनों घटनाओं को महत्व इसलिए मिल गया कि डेढ़ महीने बाद ही इस क्षेत्र में विधानसभा की एक सीट का उपचुनाव होने वाला है। इस तरह कथा चुनावी राजनीति से जुड़ जाती है और फिर अनेक तरह की चुनावी उठा–पटक और हथकंडेबाजी है। सत्तारूढ़ पक्ष द्वारा सत्ता में बने रहने और विपक्ष द्वारा सत्ता हथियाने के दाँव–पेंच हैं। आगज़नी की घटना और बिसू की मौत को सारे हथकंडों और दाँव–पेंचों का आधार बनाया जाता है। आपातकाल के कुछ पहले से लेकर जनता पार्टी की सरकार बनने तक की संपूर्ण राजनीतिक परिप्रेक्ष्य उपन्यास के कथानक में समाहित है। यह सारा परिप्रेक्ष्य जाना–पहचाना है, परन्तु घटनाओं और स्थितियों को इस तरह संजोया गया है कि पाठक को यह सारी जानकारियाँ नई उपलब्धि–सी जान पड़ती हैं। यही इस उपन्यास की मौलिकता है।

'महाभोज' घटना–बहुल उपन्यास है, परन्तु घटनाओं का संगुफन इतना कसा हुआ है कि पाठक का मन एक क्षण के लिए भी इससे इधर–उधर नहीं होता। वह आरंभ से अंत तक पात्रों के साथ तादाम्य स्थापित करके घटनाक्रम का सहभागी बना रहता है। कथ्य की प्रभविष्णुता और रोचकता को बनाए रखने के लिए सम्पूर्ण इतिवृत्त को व्यंग्य का रूप दे दिया गया है। वे व्यंग्य आज के सामाजिक और राजनीतिक जीवन का तीखा प्रहार करते हैं।

'महाभोज' की कथा–संरचना में विविधता है। गाँव–शहर, शोषक–शोषित का वर्ग–संघर्ष, राजनीतिक भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी आदर्श और यथार्थ आदि के विविध–वर्णी सूत्रों से उपन्यास का कथापट बुना गया है, परन्तु इन सूत्रों को लेखिका ने न तो कहीं उलझने दिया है और न कहीं टूटने दिया है। इसलिए घटना–वैविध्य होते हुए भी कहानी सरल और मितव्ययतापूर्ण है।

उपन्यास के आरंभ में बिसेसर की मौत और आगज़नी की घटना की सूचना के बाद उपचुनाव में सत्तापक्ष के उम्मीदवार लखनसिंह और मुख्यमंत्री दा साहब के बीच चलने वाले वार्तालाप कथा–विकास के 'आरंभ' की अवस्था कह सकते हैं। दा साहब के साथ दत्ता बाबू की बातचीत के बाद 'मशाल' के बदले हुए स्वरूप और सुकुल बाबू के भाषण के साथ कथा का 'विकास' होता है और एस.पी. सक्सेना द्वारा केस की दोबारा जांच के रूप में उसका 'विस्तार' हुआ है। सक्सेना द्वारा रिपोर्ट को नए सिरे से लिखने की आवश्यकता जताने और पाँडेजी द्वारा जोरावरसिंह के चुनाव में खड़े होने की सूचना के साथ 'उत्कर्ष' पर पहुँची कथा वहाँ से उतार पर आने लगती है, जब दा साहब एस.पी. सक्सेना द्वारा तैयार रिपोर्ट का पंजा फैलाकर जोरावर और बिंदा दोनों को मुट्ठी में बंद कर लेते हैं और अपनी कुटिल नीति का प्रयोग करते हुए एक–एक करके मामलों को निबटाते चलते हैं। जोरावर की चौपाल का जमावड़ा, सिन्हा के यहाँ पार्टी दत्ता द्वारा लड्डू बाँटना और सुकुल बाबू द्वारा आयोजित रैली की सफलता का सेलीबेशन कथा का अंत है।

स्पष्ट है कि आज की भ्रष्ट एवं मानवी–मूल्यों से रहित राजनीति के यथार्थ की धरती से चुने हुए विभिन्न प्रसंगो का सफल संगुफन करके लेखिका उन्हें एक सफल व्यंग्यात्मक उपन्यास के कथानक का रूप देने में सफल रही है।

'महाभोज' उपन्यास का मूल परिदृश्य राजनीति है। अंतःपत्रों का चयन भी कथा के अनुरूप राजनीति के क्षेत्र से हुआ है। राजनीति के जन–सामान्य से जुड़ने के साथ वर्ग–चेतना का विकास भी आज के युग की विशेष देन है। उस चेतना का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र भी उपन्यास में है। उपन्यास में दा साहब, सुकुल बाबू और लोचन भैया पूरी तरह राजनीति से जुड़े पात्र हैं जो जोरावर राजनीति, गुंडागर्दी और सामंतशाही की मिली–भगत का प्रतिनिधित्व करता है। राजनीति से जुड़े पात्रों में दा साहब और सुकुल बाबू भ्रष्ट, कुटिल, सत्ता–लोलुप और हथकंडेबाजी की राजनीति करते हैं तो लोचर भैया आदर्शवादी और सिद्धान्त प्रिय राजनेता है। बिसेसर, बिंदा और रुक्मा वर्गचेतना से युक्त संघर्षरत पात्र है। उस 'लपकती' अग्निलीक का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिनका यह उपन्यास समर्पित है।

उपन्यास के पात्र वर्गगत या प्रतिनिधि प्रकार के पात्र होते हुए भी वैयक्तिता लिए हुए हैं, उनकी अपनी स्वभावगत विशेषनाएँ हैं, काम करने का अपना ढंग है, सबका अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व है।

चरित्र–चित्रण के लिए बहिरंग और अंतरंग, दोनों विधियों का उपयोग किया गया है। बहिरंग पद्धति में पात्रों की आकृति, देहगठन और उनके कार्यकलापों से चरित्रगत विशेषताओं को

उकेरा गया है। अंतरंग–पद्धति का प्रयोग करते हुए पात्रों के चेतन और अवचेतन के क्रियाकलापों में अच्छा सामंजस्य स्थापित किया गया है। चरित्र–चित्रण के लिए वर्णनात्मक विधि के अन्तर्गत पूव्र–दीप्ति (फ्लैशबैक) विधि के साथ विश्लेषणात्मक और नाट्य–विधि से भी पर्याप्त काम लिया गया है।

प्रमुख पात्रों के अतिरिक्त सिन्हा और सक्सेना के जैसे पात्रों की सृष्टि सरकारी–तंत्र में बेईमान और ईमानदार दोनों प्रकार के पात्रों की उपस्थिति दर्ज कराती है। बिहारीभाई, काशी और पाँडे चाटुकार जी–हुजूर और दत्ता बिके हुए पत्रकार। रुक्मा के अतिरिक्त उपन्यास का कोई स्त्री–पात्र विशेष प्रभाव नहीं छोड़ता। उपन्यास के स्त्री–पात्र नहीं के बराबर ही है। बापट, राव और चौधरी फैन्स पर बैठे बिकाऊ राजनीतिज्ञ हैं और हीरा पीड़ित निम्नवर्ग की करुण मूर्ति है।

'महाभोज' की संवाद–योजन कथा को गति देने की दृष्टि से पर्याप्त सफल रही है। उपन्यास में विस्तार पाने वाली घटनाओं की सूचना लखन और दा साहब के प्रारंभिक संवादों में ही निहित है। 'मशाल' की भूमिका भी दा साहब और दत्ताबाबू के संवादों के साथ निश्चित हो जाती है।

उपन्यास के संवाद–पात्रों के चरित्र–चित्रण में भी बहुत सहायक रहे हैं। बिसू का सारा चरित्र सक्सेना द्वारा लिए गए बयानों के अन्तर्गत आनेवाले संवादों के माध्यम से ही उजागर हुआ है। दा साहब के चरित्र की कटिलता उनके संवादों में व्यक्त है। सुकुल बाबू के कथन भी उनके व्यक्तित्व के अनुरूप हैं। उपन्यास में ऐसे संवादों की अधिकता है जिनके साथ लेखिका ने पात्रों की भाव–भंगिमा, दूसरे पात्रों पर होने वाली प्रतिक्रिया अपने ही द्वारा कही गई बात के औचित्य–अनौचित्य पर पात्र पुनर्विचार–सा करता है और दोबारा या आगे अपनी बात कहता है। ऐसे संवाद गीच–बीच में टूट–टूट (...) कर चले हैं। इससे पात्रों का अंतर्द्वंद्व बहुत स्वाभाविक रूप में व्यक्त हो पाया है।

महाभोज के संवादों में नाटकीयता भी पर्याप्त मात्रा में है। इस प्रकार के संवादों में लेखिका ने पात्रों की भाव–भंगिमा अथवा उनकी क्रिया–प्रतिक्रिया आदि पर कोई टिप्पणी नहीं की, बल्कि उन्हें सीधे नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया है। उदाहरण के लिए–

"सरोहा में भाषण पन्द्रह तारीख को है न–यानी परसों ?"

"हाँ जी।"

"तैयारी ?"

"घरेलू–उद्योग–योजना का प्रचार पूरे जोर–शोर के साथ हो रहा है। हमारे लोग घर–घर जाकर समझा रहे और फार्म भरवा रहे हैं।"

"लोगों की प्रतिक्रिया ?"

"कुछ लोगों मन में बहुत उत्साह है–कुछ के मन में अविश्वास की बातें तो कब से सुन रहे हैं, कुछ होएगा–जाएगा भी या यों हीं।"

"कागजी योजनाएँ अविश्वासी भी तो बना देती हैं लोगों को ?"

'महाभोज' के संवादों की व्यग्यात्मकता बहुत पैनी है। दा साहब और सुकुल बाबू के आचरण के विपरीत संवादों के संदर्भ में यह बात विशेष रूप से लागू होती है। लेखिका ने सीधे और स्पष्ट व्यंग्य लिखने में भी संकोच नहीं किया है। उपन्यास के संवादों में प्रसंगानुकूल मार्मिकता और आवेश के साथ संक्षिप्तता और उद्ददेश्यपूर्णता भी है। कहीं–कहीं कुछ संवाद गंभीर अवश्य हैं, परन्तु विचार–बोझिल नहीं है। समग्र रूप से 'महाभोज' की संवाद योजना में व्यंग्य की कटु–तीक्ष्णता है, जिसका प्रयोग बड़ी कुशलता से किया गया है।

आज के उपन्यासों में देशकाल और वातावरण का चित्रण परंपरागत ढंग से नहीं होता। परिस्थितियों के चित्रण द्वारा देश एवं काल का आभास देना आज अधिक स्वाभाविक और कलात्मक माना जाता है। आज के लेखक को देशकाल का परोक्ष नियोजन अधिक इष्ट है। 'महाभोज' के देशकाल में गाँव और शहर दोनों हैं, परन्तु दोनों का वर्णनात्मक विवरण उपन्यास में कहीं नहीं है। कथा के केन्द्र सरोहा गांव का कोई भौगोलिक, प्राकृतिक या सांस्कृतिक परिवेश नहीं है–इतना ही कि शहर से बीस मील दूर सड़क के किनारे स्थित गाँव है। सड़क पर एक पुलिया है और उसके नीचे से एक नाला बहता है। हरिजन–टोला गाँव की सरहद से थोड़ा हटकर है, जो परंपरागत वर्ग एवं वर्ण–भेद की दिशा में एक संकेत है।

हीरा के घर तक कार जाने लायक रास्ते का न होना, गाँव के थाने की अवस्था गाँव के पिछड़ेपन और लोगों के घर, गाय–भैंस–बैल आदि का जोरावर या सरपंच के यहाँ रेहन रखे होने तथा दो वक्त के मुफ्त खाने और पाँच रुपये प्रतिव्यक्ति लेकर लोगों का सुकुल बाबू की रैली में शामिल होना गाँव का आर्थिक दुरावस्था का अंकन करता है।

शहर के नाम पर भी 'महाभोज' उपन्यास में किसी विशेष शहर का चित्र नहीं उभरता। सचिवालय, प्रशासनिक और राजनीतिक गतिविधियों के न होने का वर्णन है। इस आधार पर शहर उत्तर या मध्य भारत के किसी प्रांत की राजधानी के रूप में कोई भी बड़ा शहर हो सकता है।

'महाभोज' उपन्यास का प्रकाशन 1979 में हुआ। उपन्यास के प्रमुख पात्र बिसेसर के विषय में "पाँच साल पहले जब बिना वजह पकड़कर उसे जेल में डाल दिया था तो सब साँस खींचकर बैठ गए, तब तो इमरजेंसी भी नहीं थी ....." कथन से स्पष्ट है कि उपन्यास में आपातकाल से पहले की स्थिति को कहानी की पृष्ठभूमि के रूप में अपनाया गया है और उसके बाद–"तभी राजनीति में ऐसी मारक दवा चली जिसने बड़े–बड़े राजनेताओं की रीढ़ की हड्डी को नीचे खींचकर उसमें बदल दिया था....." में आपातकाल का चित्रण है। इसके बाद "एक जोरदार बवंडर। कुर्सियों पर बैठे सारे लोग धड़ाधड़ नीचे आ गिरे। बड़ी–बड़ी हस्तियाँ तक नहीं टिक पाईं।" में आपातकाल के बाद होनेवाले चुनाव और जनता पार्टी का शासनकाल चित्रित है।" जब पार्टी की सत्कार में–"असंतोष का सिलसिला तो मंत्रिमंडल बनने के पहले दिन ही शुरू हो गया था, पर उस समय परिस्थिति की माँग कुछ ऐसी थी कि सबने अपने–अपने चेहरों पर स्नेह, सद्भाव, संतोष और एकता के मुखौटे चढ़ा लिए थे, कसकर और आदर्शों के लबादे ओढ़ लिए थे।..... पर घटनाएँ कुछ इस तरह घटती रहीं कि मुखौटों पर दरार पर दरारें पड़ने लगी और लबादों के चिथड़े बिखरने लगे।..... कसमसाते सबके असली चेहरे निकल आए अपने पूरे नंगेपन के साथ।" मंत्रीपदों का खुला मोल–भाव होने लगा और सिद्धांतवादी लोगों को निकालकर बाहर फेंक दिया गया। "नाम, चेहरे, लेबल भले ही अलग–अलग हों–पर अलगाव है कहाँ–सुकुल बाबू..... दा साहब.... राव.... चौधरी।" जो लोग "एक बहुत बड़ी क्रान्ति के एक छोटे–से वाहक बने थे।" वे बाहर फेंके जाकर यही सोचते रहे– "कैसी हुई यह क्रान्ति? कहीं कुछ भी तो नहीं बदला..... आज तो परिवर्तन का नाम लेने वाले की आवाज घोंट दी जाती है–उसे काटकर फेंक दिया जाता है।" इस पूरे युग का संपूर्ण राजनीतिक परिवेश अपने पूरे यथार्थ के साथ उपन्यास में वर्णित है।

'महाभोज' में वातावरण का चित्रण यथार्थ के कोण से हुआ है। प्रत्येक स्थिति की गहराई में जाकर सूक्ष्मता से उसका विश्लेषण किया गया है। राजनीति में गुंडागर्दी को मिलने वाला संरक्षण, सूचना माध्यमों और विधायकों को

खरीद–फरोख्त तथा पुलिस आदि प्रशासनिक इकाइयों के मनचाहे उपयोग के साथ चुनावी–हिंसा, हुड़दंग और नर–संहार आज की राजनीति के कटु और नग्न सत्य हैं, जिन्हें लेखिका ने निर्भीक भाव से उरेहा है। विश्वसनीय यथार्थ 'महाभोज' के देशकाल और वातावरण की बड़ी विशेषता है।

'महाभोज' उपन्यास में कथ्य की प्रस्तुति के लिए प्रधान रूप से वर्णनात्मक शिल्पविधि को अपनाया गया है। वर्णनात्मक शिल्प की दो विधियाँ होती हैं–पहली विधि में उपन्यासकार कथा को कालक्रमानुसार प्रस्तुत करता है, जो पात्र जिस समय महत्वपूर्ण होता है, उसको केन्द्र में रखकर कथा की उपस्थापना की जाती है। दूसरी विधि में उपन्यास का कोई पात्र आरंभ से अंत तक सारी कथा को प्रस्तुत करता है और साथ ही पात्रों के क्रियाकलापों तथा चरित्रों के बारे में टिप्पणी करता चलता है। 'महाभोज' में पहली विधि को अपनाया गया है। बिसू की मौत की घटना को केन्द्र में रखकर उपन्यास की मूल समस्या–भ्रष्ट राजनीति के परिणामस्वरूप जीवन–मूल्यों के विघटन की समस्या के सब पहलुओं को लेकर लेखिका ने सारा कथावृत्त प्रस्तुत किया है। बीच–बीच में विश्लेषणात्मक, अन्वेषणात्मक, पूर्वदीप और पाटकीय पद्धतियों का प्रयोग भी कुशलता के साथ किया गया है। पात्रों के अंतर्द्वंद्व के चित्रण में विश्लेषणात्मक पद्धति का बहुत अच्छा उपयोग किया गया है। बिसू का संपूर्ण चरित्र पूर्वदीप्ति पद्धति में ही अंकित हुआ है।

शिल्प की दृष्टि में 'महाभोज' में उपन्यास की समाप्ति से पहले एक विशिष्ट प्रयोग भी हुआ है। सुकुल बाबू की रैली की सफलता पर आयोजित पार्टी में बिना किसी के नामोल्लेख के छोटे–छोटे कथन प्रस्तुत करके उनके नीचे अत्यंत संक्षिप्त टिप्पणियाँ दी गई हैं, जिनसे चुनावी राजनीति अपनी संपूर्ण व्यग्यात्मकता के साथ प्रत्यक्ष हो जाती है–

"बिन्दा की गिरफ्तारी ने तो हमारा पक्ष और भी मजबूत कर दिया। बड़े ही माकूल मौके पर हुई गिरफ्तारी।"

एक उल्लसित स्वर।

दो पहले हो गई होती तो दस–बीस पोस्टर बिन्दा के नाम के भी उठवा देते।.. दस प्रतिशत वोट तो फूअ ही आएँगे हमारी तरफ।"

एक सुखद सूचना।

'लाश', 'गिद्ध' और 'महाभोग' का प्रतीकात्मक प्रयोग प्रस्तुत उपन्यास की शैली की एक अन्य विशेषता है। असंगठित और चेतनाशून्य गरीब जनता ही वह लाश है, जिसको भ्रष्ट राजनेता और उनके आश्रम में पलने वाली सामंती गुंडे और रिश्वतखोर सरकारी अधिकारी रूप गिद्ध नोंच–नोंचकर खा जाते हैं और महाभोज का उत्सव मनाते हैं। 'महाभोग' उपन्यास का लहजा प्रमुख रूप से व्यंग्यात्मक है। अनेक स्थलों पर आवेश शैली का प्रयोग भी हुआ है। लोचन भैया और बिन्दा के कथा–प्रसंगों में इस शैली का प्रयोग भली प्रकार देखा जा सकता है।

'महाभोग' के भाषा–प्रयोग में भी व्यंग्य का पुट अधिक है। दा साहब, सुकुल बाबू और दत्ता चरित्र–चित्रण के लिए इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग अधिक हुआ है। प्रस्तुत उपन्यास की भाषा की चित्र–विधायिनी शक्ति भी अद्‌भुत है। गाँव के थाने का वर्णन, सुकुल बाबू की सभा की तैयारियों के वर्णन तथा पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं के चित्रण में भाषा की इस क्षमता को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है। मुख्यमंत्री दा साहब की घरेलू–उद्योग–योजना का प्रचार–कार्य शब्दों के माध्यम से पाठक के सामने साकार रूप ले लेता है। प्रसंगानुकूलता 'महाभोज' की भाषा की एक अन्य विशेषता है। शिक्षित पात्रों और गाँव के अनपढ़ लोगों की भाषा में स्पष्ट अंतर है। पात्रों

की मनःस्थिति के चित्रण के समय भाषा अपने प्रतीकार्थ में भी सार्थक और सफल रही है। उदाहरण के लिए उपन्यास के अंत में एस.पी. सक्सेना के मनोद्वंद्व के चित्रण को देखा जा सकता है। आवेशात्मक प्रसंगों में भाषा भावों के अनुरूप ढलती गई है। मन्नू जी ने भाषा के जड़ और रुढ़ प्रतिमानों को तोड़कर सीधी–सरल भाषा का प्रयोग किया है। इसलिए उपन्यास की संप्रेषण–सामर्थ्य प्रभावशाली बन पड़ी है। कहावतों और मुहावरों के प्रयोग ने भाषा को जीवतंता प्रदान की है। 'महाभोग' की वाक्य–रचना विविधता लिए है। उसमें सरल और संयुक्त, दोनों ही प्रकार के वाक्यो का प्रयोग हुआ, परंतु उनमें कहीं उबाऊपन या उलझाव नहीं है। वाक्य–रचना में व्याकरणिक नियमों को बदलकर शब्द–प्रयोग को अधिक प्रभावशाली बना दिया गया है– "तर्क बिल्कुल ठीक था विरोध करने वालों का–एकदम ठोस और वजनदार। पर दा साहब की भेदग–दृष्टि तर्क पर ही नहीं भटकती–मंशा तक पहुँचती है सीधी।" इत्यादि वाक्यों को उदाहरण रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

सार–रूप में 'महाभोज' शिल्प–शैली और भाषा–प्रयोग की दृष्टि से एक सशक्त और कलात्मक रचना है।

कथा–साहित्य कालक्रमागत जीवन–यथार्थ ही नहीं होता, वह कुछ जीवन–मूल्य भी देता है। 'महाभोज' की लेखिका ने इस दिशा में अपना अभिमत व्यक्त करते हुए लिखा है–

"अपने व्यक्तिगत दुःख–दर्द, अंतर्द्वंद्व या आतंरिक नाटक को देखना बहुत महत्वपूर्ण, सुखद और आश्वस्तिदायक तो मुझे भी लगता है, मगर जब घर में आग लगी हो तो सिर्फ अपने अंतर्गत में बने रहना या उसकी का प्रकाशन करना क्या खुद ही अप्राकृतिक, हास्यास्पद और किसी हद तक अश्लील नहीं लगने लगता। सम्भवतः इस उपन्यास की रचना के पीछे यही प्रश्न रहा हो। इसे में अपने व्यक्तित्व और नियति की निर्धारित करने वाले परिवेश के प्रति अपने ऋण–शोध के रूप में देखती हूँ।"

स्पष्टतः शोषित और पीड़ित जनसमाज को भ्रष्ट और अत्याचारी शासनतंत्र के विरुद्ध संगठित चेतना की प्रेरणा देना प्रस्तुत उपन्यास का उद्देश्य है। आज का परिवेश साहित्यकार से यही माँग भी करता है।

बिसू, बिन्दा, लोचन भैया और एस.पी. सक्सेना के माध्यम से भ्रष्ट और हथकंडेबाजी तथा गुंडागर्दी को संरक्षण प्रदान करने वाली राजनीति का पर्दाफाश करके वर्ग–चेतना का संदेश प्रस्तुत उपन्यास में है। उपन्यास के समर्पण रूप में अंकित पंक्तियाँ उसके उद्देश्य के विषय में अधिक कुछ कहने के लिए शेष नहीं रहने देती–

"दुर्विकार सम्मोहन–भरी उस खतरनाक लपकती अग्नि–लीक के लिए जो बिसू और बिंदा ही नहीं रुकी रहती....." लेखिका को दृढ़ विश्वास है कि "जब सही माहौल बनेगा..... स्थितियाँ ठीक ढंग से आकार लेंगी वहीं से आएगी क्रांति। वह 'सही माहौल' बनाने की दिशा में रचनाकार के दायित्व का निर्वाह ही 'महाभोज' उपन्यास का उद्देदश्य है।"

समग्रतः कहा जा सकता है कि हिन्दी के राजनीतिक उपन्यासों में 'महाभोज' एक विशिष्ट उपलब्धि है, जो कलात्मक दृष्टि से अत्यंत सुगठित और प्रभावशाली रचना है।

संदर्भ

1. मन्नू भण्डारी का रचनात्मक अवदान–सं0 सुधा अरोड़ा, पृ. 08
2. महाभोज एक विवेचनः– डॉ. ओम प्रकाश 'तरूण' एवं डॉ. सुरेश अग्रवाल, पृ. 19
3. मन्नू भण्डारी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व–डॉ. मनोज सिंह, पृ. 123

4. मन्नू भण्डारी के साहित्य का एक आलोचनात्मक अध्ययन–डॉ. संतोष कुमार राव, पृ. 148
5. महाभोजः एक मूल्यांकन–राम प्रसाद मिश्र, पृ. 129